शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 मार्च 2014

अनुसंधान प्रविधि में पांडुलिपि विज्ञान

डॉ.शफ़ीकुन्निसां खान
विभागाध्यक्ष, तुलनात्मक भाषा विज्ञान एवं संस्कृति विभाग
बरकतउल्ला वि.वि. भोपाल, म.प्र., भारत

शोध संक्षेप

आधुनिक उन्नति का साधन प्राचीन उपलब्धियों का समुचित उपयोग माना जाता है। प्राचीन उपलब्धियों के माध्यम से ही भावी आवश्यकताओं की पूर्ति तथा समुचित निर्माण हो सकता है। इस कारण प्रत्येक राष्ट्र प्राचीन राष्ट्रीय धरोहर को विशेष महत्व देते हैं। देश-विदेश के मनीषियों ने अपने ज्ञान-विज्ञान को भावी पीढ़ी के लिए पांडुलिपियों में सुरक्षित किया है, जिसके फलस्वरूप भारी संख्या में पांडुलिपियों के भण्डार प्राप्त होते हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में पांडुलिपि विज्ञान पर विचार किया गया है।

प्रस्तावना

हमारा देश भारत पाण्डूलिपियों में सबसे अधिक समृद्ध है। मेक्समूलर ने लिखा है 'सारे संसार में ज्ञानियों और पण्डितों का भारत ही एकमात्र, ऐसा देश है जहाँ की विपुल ज्ञान-सम्पदा हस्तलिखित ग्रंथों के रूप में सुरक्षित है। पांडुलिपि की आवश्यकता को देखते हुए विधिवत सर्वेक्षण संग्रह, संरक्षण, सूचीकरण, अध्ययन, सम्पादन और प्रकाशनादि कार्यों के लिए पांडुलिपि विज्ञान के विकास की महती आवश्यकता है।

पांडुलिपि लेखन के आधार -

प्राचीनकाल में लेखन के लिये ताड़पत्र, भोज-पत्र, चर्मपत्र, तामृपत्र, पत्थर, बाँस, हाथीदांत, वस्त्र, शीषा, कागज, आदि का उपयोग होता था। यूरोप में लेखन के लिए एक प्रकार के पेड़ की छाल काम आती थी जिसे पेपर्स कहा जाता था। ताड़पत्रों पर राजस्थान और गुजरात में स्याही से लिखा जाता था तथा दक्षिण भारत में तीखी सलाई से अक्षर कुरेदे जाते थे और उन्हें काजल से काला किया जाता था। भोज-पत्र मुख्यतः हिमालय से प्राप्त होता है। यह एक प्रकार के वृक्ष की भीतरी छाल होती है। कागज का आविष्कार 105 ई. पू. में चीन द्वारा किया गया है। किन्तु 327 ई.पू.में सिकन्दर के साथ भारत आने वाले 'निआरकस' ने रूई को कूटकर भारत में कागज बनाने का उल्लेख किया है और इसी आधार पर मैक्समूलर ने कागज के आविष्कार का श्रेय भारतवर्ष को ही दिया है। कपड़े तथा चमड़ों पर भी लिखा जाता था। चट्टानों, षिलाखण्डों और मूर्तियों पर भी अनेक लेख प्राप्त होते हैं।

पांडुलिपि के प्रकार

विभिन्न प्रकार में पांडुलिपि मिलती है। एक ही जिल्द में बंधी पांडुलिपि को गुटका कहते हैं। चित्रों में भी अनेक रचनाएँ मिलती हैं। स्फुट पत्र वाली पांडुलिपि को 'खरड़ाकार' कहा जाता है।

पांडुलिपि लेखन की विधि-

पाण्डूलिपि के लेखन की दृष्टि से अनेक रूप है, जिन्हें एक पाठ, द्विपाठ, त्रिपाठ और चक्राबन्धाकार आदि कहा जाता है। पच तोमर, मुद्गर, परष, रथ, हस्ति, अश्व आदि रूपों में भी लिखने की परम्परा रही है।

लेखन सामग्री-

लेखन सामग्री में स्याही का मुख्य स्थान है। स्याही दो प्रकार की होती है। पक्की व कच्ची। पक्की स्याही पीपल की लाख को पानी के साथ गोंद व सुहागा मिलाकर पकाने और फिर तिल के तेल का काजल कपड़े की पोटली में बाँधकर इससे मिलाने से बनती थी। कच्ची स्याही एक बर्तन में मोटे ताँबे के पैसे डालकर कई दिन लकड़ी की मूठ से घोंटी जाती थी। फिर दीपावली के अवसर पर दवात-पूजन से नयी स्याही काम में ली जाती थी।

भोजपत्र पर लिखने के लिए नादाम के छिलके का कोयला बनाया जाता है और इस कोयले को गो-मूत्र में उबालकर स्याही तैयार की जाती थी। लाल स्याही आलता अथवा हिंगलू को गोंद के पानी में घोटकर बनायी जाती थी। हरताल से ही पीली स्याही तैयार होती थी। सोने व चाँदी के बर्कों को गोंद के पानी में घोटकर सुनहरी और रूपहली स्याही तैयार की जाती थी। हरताल से बनी पीली स्याही अशुद्ध लेखन पर लगाकर उस पर पुनः काली स्याही से शुद्ध लिखा जाता था। पांडुलिपि लेखन के अन्य साधन दवात, कलम, परकार, लेखापाटी, तख्त, आदि होते थे।

लिपि

पांडुलिपियों के साथ अनेक लिपियों का भी सम्बंध है। विचारों की सुरक्षा हेतु लिपियों का प्रचलन आरम्भ हुआ। वर्णमाला के अभाव में रज्जु अर्थात् ग्रन्थलिपि, रेखालिपि, चित्रलिपि, चीन और उत्तरी अमेरिका में प्रचलित थी। भारतीय प्रचीन लिपियों में ब्राह्मी और खरोष्ट्री के नाम उल्लेखनीय है। नागरीलिपि प्राचीन ब्राह्मी से ही विकसित हुई है। प्राचीनकाल में संकेतात्मक और चित्रात्मक लिपियाँ भी प्रयुक्त होती थी।

पांडुलिपि का अर्थ एवं अर्थ विस्तार-

पाण्डूलिपि का मूल अर्थ है लेख का पहला रूप या हर प्रकार की हस्तलिखित सामग्री को पांडुलिपि कहा जाता है। लिपि आविष्कार के पश्चात मानव ने अपने संग्रहों को विभिन्न पटल पर अंकित करना आरम्भ किया। हमारे देश से सबसे प्राचीनलिपि चिह्न मोहन-जोदड़ो की संस्कृति में प्राप्त होते हैं। सर जान मार्शल के अनुसार 'सिन्धु घाटी के लेखक मिट्टी की टिकियों के समान अनय सामग्री के अभाव में, मिट्टी के स्थान पर भोज-पत्र, ताड़पात्र, वृक्षों की छाल, लकड़ी जैसी अल्पजीवी सामग्री का उपयोग करते होंगे, जो कालान्तर में स्वाभाविक रूप में नष्ट हो गयी होगी।'

इस प्रकार आरम्भ में लिपि के माध्यम से जो भी सुरक्षित रखने का प्रयास किया गया उसके लिए भोज-पत्र, ताड़पत्र, वृक्षों की छाल, लकड़ी आदि के पटल काम में लाये गये। पांडुलिपि की अर्थ सीमा भोजपत्र, ताड़पत्र, घातुखण्ड, पाषाण से चलती हुई कागज पर आयी। आजकल अधिकांश पांडुलिपियाँ कागज पर लिखी हुई उपलब्ध होती हैं। सम्पादक को किसी भी पटल पर अंकित पांडुलिपि मिले उसे कार्य करना होता है।

पांडुलिपि सम्पादन-

जब किसी लेखक या कवि की मूल रचना प्रथम बार लिपिबद्ध की जाती है तब उसके दो रूप हो सकते हैं।

1. रचनाकार का अभीष्ट रूप।

2. लिपिकर्ता द्वारा प्रस्तुत उस अभीष्ट रूप का प्रथम रूप।

यदि रचानाकार अपनी रचना लिपिबद्ध करता है तो वह उसे शुद्ध रूप् देने का प्रयास करता है किन्तु उसकी लिपि में कोई त्रुटि रह जाती है तो उसके दो कारण सम्भव हैं-

1. रचनाकार की अज्ञानता।

2. रचनाकार की असावधानी।

किसी कारणवश रचनाकार अपनी रचना को लिपिबद्ध नहीं कर पाता तो वह किसी का सहारा लेता है तब पांडुलिपि की शुद्धता में निम्न बातें बाधक होती है--

1. उच्चारण दोष- लिपिकर्ता जैसा बोलता है वैसा ही लिखता है।

2. श्रवण दोष- श्रवण दोष के कारण लिपिकार, रचनाकार के कथन को सही रूप में अंकित नहीं कर पाता।

3. भाषाज्ञान- लिपिकर्ता का ज्ञान अधिक होता है तो वह रचनाकार के कथन को अपने अनुसार संषोधन कर प्रस्तुत करता है और यदि भाषा ज्ञान कम होता है तब वह ठीक श्रवण करने पर भी अशुद्ध रूप अंकित कर देता है।

4. क्षेत्रीय प्रभाव- जब रचनाकार और लिपिकार अलग-अलग क्षेत्रों के निवासी होते हैं, तब उनका अन्तर रचना में सहज रूप से स्पष्ट झलकता है।

उपर्युक्त कारणों से पांडुलिपि में अनेक अशुद्धियाँ हो जाती हैं। ये अशुद्धियाँ समय के साथ-साथ बढ़ती और बदलती चली जाती हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1 पंचशील प्रकाशन, किल कॉलोनी चौड़ा रास्ता जयपुर,
2 अनुसंधान प्रविधि सिद्धांत एवं प्रक्रिया, एस.एन गणेषन, लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली
3 रिसर्च मेंथेडोलोज, डॉ.आर.एन.त्रिवेदी, डॉ.डी.पी शुक्ला, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर
4 हिन्दी शोध तंत्र की रूपरेखा, डॉ.मनमोहन सहगल, पंचशील प्रकाशन, जयपुर,